मै ही भारत का घोषणापत्र

डॉ सुबोध चंद्र राय

एम.एससी., पीएच.डी., एलएल.बी.

राष्ट्रीय अध्यक्ष

भारत, जिसे इंडिया भी कहा जाता है, एक स्वतंत्र, सार्वभौमिक, लोकतांत्रिक देश के रूप में जाना जाता है। लोकतंत्र के नियमों और शर्तों के अनुसार, ऐसे देश को उसकी अधिकांश जनसंख्या की इच्छाओं के अनुरूप प्रबंधित किया जाना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि ऐसी इच्छाओं को अनिवार्य रूप से वास्तविकता में बदलना होता है। यदि यह माना जाता है कि भारत नामक देश में लोकतंत्र जड़ जमा चुका है, तो जो कुछ भी यहां हो रहा है, उसे उपरोक्त बहुमत की इच्छाओं के प्रतिबिंब के रूप में देखा जाना चाहिए। अतः करोड़ों लोगों की भूख, अनपढ़ता, बेरोजगारी, बीमारी आदि जो इस देश में आम हैं, या यहां तक कि कानून लागू करने के नाम पर राज्य के सनकी और मनमाने कार्यों के बारे में, या लगभग हर क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के बारे में, हमें पूर्ण सम्मानजनक मौन रखना चाहिए। क्योंकि, यदि लोकतंत्र का विचार सही है, तो ऐसी कोई चीज हमारी प्रत्यक्ष सहमति के बिना कभी नहीं हो सकती।

जैसे एक परिवार में पिता ही भोजन की व्यवस्था करता है, उसी प्रकार पूरे देश में किसान ही हमारा दैनिक पोषण करते हैं। इसका अर्थ है कि सभी किसानों को एक साथ सच्चे अर्थों में 'राष्ट्रपिता' के रूप में गौरवान्वित किया जाना चाहिए। लेकिन जब इस देश में लाखों किसानों द्वारा आत्महत्या की खबरें आती हैं, जो भूख या कर्ज न चुका पाने की चिंता के कारण होती हैं, तो क्या लोकतांत्रिक

भारत को अपने शर्म का कोई ठिकाना मिलता है? इस स्पष्ट विरोधाभास की एक ही व्याख्या है: लोकतंत्र के नाम पर और उसके भेष में, इस देश के लोगों को लगातार एक मजाक देखने के लिए मजबूर किया जा रहा है।

केंद्रीय विषय में प्रवेश करने से पहले, आइए भ्रष्टाचार के मुद्दे से शुरुआत करें। लोग मांग कर रहे हैं कि इस बीमारी को किसी भी कीमत पर ठीक किया जाना चाहिए, क्योंकि केवल इसी कारण से देश प्रगति नहीं कर रहा है। कहा जा रहा है कि देश से गैरकानूनी तरीके से हजारों करोड़ रुपये हड़पे गए हैं, उन्हें वापस लाया जाना चाहिए, आदि। यहां भी एक सवाल उठता है: क्या इसका मतलब यह है कि इस देश के अधिकांश लोग बेईमान हैं? अन्यथा, एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में ऐसी व्यवस्था कैसे चल सकती है? इतनी अधिक धनराशि सामान्य कानूनी प्रक्रिया का पालन किए बिना विदेश नहीं भेजी जा सकती थी, जिसका अर्थ है कि धन के उक्त अपवाह के लिए भी इस देश के अधिकांश लोगों की प्रत्यक्ष सहमति है। यह सर्वविदित है कि छिद्र वाले बर्तन में पानी नहीं रखा जा सकता, लेकिन ऐसा लगता है कि हम लगातार ऐसे बर्तन में पानी डाल रहे हैं। चूंकि हम न तो उस बर्तन की मरम्मत करने की कोशिश कर रहे हैं और न ही उसे बदलने की, इसलिए पानी की बर्बादी व्यापक है।

लेकिन जैसे नमक से लवणता को नहीं हटाया जा सकता, उसी तरह इस देश से भ्रष्टाचार को मिटाना असंभव है, क्योंकि अन्याय इस राज्य की मूल नींव है! इस प्रस्ताव के प्रमाण के लिए, हमें इस देश में 'कानून' नाम के नियमों और विनियमों के वास्तविक इरादे को समझने की जरूरत है। कई सदियों से अंग्रेजों ने इस भूमि पर शासन किया है। उनका शासन करने का एकमात्र उद्देश्य इस भूमि का शोषण और लूट का कार्य बिना किसी बाधा के जारी रखना था। जैसे शरीर से खून निकालने के लिए अंगों को बांधना जरूरी होता है ताकि शरीर अचल हो जाए, उसी प्रकार भारतवर्ष के लोगों को

अनगिनत कानूनों से बांध दिया गया था। इन कानूनों ने उन्हें अंग्रेजी गुलाम बनने के लिए मजबूर किया।

फिर भी, कई लोगों ने स्वतंत्रता प्राप्त करने का सपना देखा था, जिसके लिए उन्हें अमानवीय यातना सहनी पड़ी, जिसमें फांसी तक शामिल थी। यहां तक कि औपनिवेशिक स्वामी भी पंजाब के जलियांवाला बाग में हजारों निहत्थे निर्दोष पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की अंधाधुंध गोलीबारी से हत्या करने के लिए अपनी पलकें नहीं झपकाते थे। कहा गया था कि उस भीषण घटना में सब कुछ कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार था। इस संबंध में यह याद रखने की जरूरत है कि उक्त कानून ब्रिटिश संसद द्वारा इस भूमि पर रहने वाले लोगों के मन से स्वतंत्रता और स्वतंत्रता की अवधारणा को भी मिटाने के लिए बनाए गए थे।

हजारों किताबों में लिखा गया है कि 15 अगस्त 1947 को 'इंडिया' नामक क्षेत्र एक स्वतंत्र देश के रूप में उभरा, जिससे हमारे आदरणीय स्वतंत्रता सेनानियों का सपना पूरा हुआ। लेकिन बस पीछे मुड़कर एक नज़र डालने पर कोई भी आसानी से सत्यापित कर सकता है कि उस दिन, कई अन्य ब्रिटिश कानूनों की तरह, केवल एक और अधिनियम, जिसे 'Indian Independence Act, 1947' (भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947) कहा जाता है, उक्त क्षेत्र में लागू हुआ था। बड़ी संख्या में लोगों से पूछा गया था कि क्या उन्होंने स्वयं उक्त अधिनियम देखा है, जिसके जवाब में किसी ने भी सकारात्मक उत्तर नहीं दिया था। उन्होंने या तो अखबार में पढ़ा था या रेडियो पर सुना था कि उस दिन देश 'स्वतंत्र' हो गया था। हालाँकि, वास्तविकता में, उक्त अधिनियम के संदर्भ में, 'इंडिया' को 'स्वतंत्र देश' के रूप में स्थापित नहीं किया गया था। तत्कालीन ब्रिटिश क्षेत्र 'इंडिया' में, उक्त अधिनियम के संदर्भ में, केवल दो 'New Dominion' मतलब 'नए प्रभुत्व' स्थापित किए गए थे, एक का नाम 'इंडिया' और दूसरे का 'पाकिस्तान' था। पहले केवल एक कॉलोनी 'इंडिया' थी, लेकिन प्रशासनिक सुविधा के लिए दो

कॉलोनियों की तरह दो भागों में विभाजित करके, कानून की भाषा में जिन्हें 'New Dominion' यानि 'नए अधिराज्य' कहा जाता था। उक्त अधिनियम के प्रावधान के अनुसार, यहां तक कि अधिराज्य के कार्यकारी प्रमुख, यानि गवर्नर-जनरल को चुनने की शक्ति भी संबंधित अधिराज्य के लोगों को नहीं दी गई थी; उन्हें Indian Independence Act, 1947 की धारा 5 के तहत दिए गए प्रावधान के अनुसार ब्रिटिश सम्राट द्वारा नियुक्त किया गया था।

एक और आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि यद्यपि अधिनियम को "भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम" के रूप में उद्धृत किया जाता है, फिर भी अधिनियम के पाठ में कहीं भी "स्वतंत्रता" यानि "independence" शब्द एक बार भी नहीं मिलता है! पहले से ही एक साल पहले, 1946 में, ब्रिटिश सरकार द्वारा डोमिनियन के लिए संविधान बनाने के लिए Constituent Assembly, यानि 'संविधान सभा' की स्थापना की गई थी। इस मोड़ पर, यह नहीं भूलना चाहिए कि उक्त संविधान सभा के किसी भी सदस्य 'citizen of India,' मतलब 'भारत के नागरिक' नहीं थे। ऐसा इसलिए है क्योंकि 'भारत के नागरिक' शब्द पहली बार 'भारत के संविधान' में दिखाई दिया, जिसकी प्रारंभ की तारीख 26 जनवरी 1950 थी। चूंकि कम से कम उस दिन तक ब्रिटिश क्षेत्र के सभी लोग कानूनी रूप से ब्रिटिश प्रजा थे, इसलिए उक्त संविधान में निहित प्रत्येक चीज ब्रिटिश सम्राट के इशारे पर बाध्य थी। वही संविधान वर्तमान में देश का सर्वोच्च कानून है, जिसे आवश्यकता पड़ने पर भी इस देश के स्वतंत्र नागरिक नए संविधान के लिए जगह बनाने के लिए नहीं बदल सकते हैं। इसका कारण यह है कि संविधान को बदलने का कार्य सर्वोच्च न्यायालय के एक फैसले से प्रतिबंधित होगा जो संविधान की मूल विशेषताओं में किसी भी संशोधन को प्रतिबंधित करता है। आइए यहां यह भी याद रखें कि सर्वोच्च न्यायालय स्वयं भी उसी संविधान के एक प्रावधान के तहत बनाया गया है।

इसका सीधा सा मतलब है कि हमारे पूर्व औपनिवेशिक प्रभु ने भी हमारे लिए विस्तृत तंत्र तय कर दिया है जिसके द्वारा हमें अपने मामलों का प्रबंधन करना होगा। एक बार यह वास्तविकता बन जाने पर, हमारी स्वतंत्रता कहाँ है? इस मामले को और स्पष्ट रूप से समझने के लिए, आइए एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए कि जमीन के एक टुकड़े की बिक्री के समय, विक्रेता ने एक शर्त लगाई कि उक्त भूमि पर, अपने उपकार से, वह एक झोपड़ी बनाएगा और उक्त भूमि की बिक्री के बाद, खरीदार उस झोपड़ी में रहने के लिए बाध्य होगा। यदि आवश्यक हो, तो खरीदार को उक्त झोपड़ी की मरम्मत करने का अधिकार होगा लेकिन उसे इसे ध्वस्त करने, यानी इसकी मूल विशेषताओं को बदलने और उदाहरण के लिए एक ठोस घर बनाने से प्रतिबंधित किया जाएगा। यदि उपरोक्त शर्त लेन-देन पूरा होने के बाद भी लागू रहती है, तो कानून की नजर में बिक्री शून्य है क्योंकि उक्त भूमि पर विक्रेता का अधिकार पूरी तरह से समाप्त नहीं हुआ था।

आइए मान लें कि उन दिनों में जब यह उपमहाद्वीप उथल-पुथल से गुजर रहा था, तो स्थिति से निपटने के लिए उपरोक्त शर्त को स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। लेकिन उस स्थिति में, यह अनिवार्य रूप से आवश्यक था कि उक्त संविधान में एक अनुच्छेद शामिल किया गया हो जिसके अनुसार 'स्वतंत्रता' के बाद संसद को संविधान की पुष्टि करने की शक्ति होगी, और यदि आवश्यकता पड़ी, तो उसे एक नया संविधान बनाने का अधिकार होगा। जैसा कि स्पष्ट है, संविधान में इस तरह के पुष्टिकरण अनुच्छेद का अस्तित्व नहीं है। इसका मतलब है कि ब्रिटिश डोमिनियन, जिसे 'इंडिया' कहा जाता है, के लिए बनाया गया एक संविधान, जो ब्रिटिश सम्राट के अनुकूल है, देश के सर्वोच्च कानून के रूप में लोगों पर थोपा गया है, जबकि तथ्य यह है कि हमारे सम्मानित स्वतंत्रता सेनानियों ने सपना देखा था 'इंडिया' की आबादी को ब्रिटिश शासन और शोषण से मुक्त करना। और इसके लिए, प्राथमिक शर्त 'कानून' नामक भयानक ब्रिटिश निर्मित बेड़ियों

से छुटकारा पाना था, जो ब्रिटिश विषयों को सदा के लिए अधीनता में रखने के लिए बनाए गए थे।

लेकिन 15 अगस्त 1947 के बाद भी, या उस मामले के लिए 26 जनवरी 1950 के बाद भी, अधिकांश ब्रिटिश-निर्मित कानून 'भारत' के नाम से जाने वाले क्षेत्र में लागू रहे। 'संविधान' में निहित प्रावधानों के अनुसार, ब्रिटिश-निर्मित कानूनों को एक नया जीवन मिला, जिससे ब्रिटिश-इंडियान प्रजासमूदाय को स्थिर रखने वाले तारों को अक्षुण्ण रखा गया। इसी कारण से अब भी देश को चालाकी से लोगों को उन कानूनों के पंजों में उलझाकर बेरहमी से लूटा जा रहा है जिनके बारे में अधिकांश आबादी को कुछ पता नहीं होता। वर्तमान अनुमान के अनुसार, किसी भी समय, भारत के विभिन्न न्यायालयों में लगभग तीस मिलियन मामले लंबित रहते हैं। इसके प्रभाव की सराहना करने के लिए मान लेते हैं कि प्रत्येक मामले में कम से कम दस व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं। किसी भी मुकदमे में शामिल होकर वादी इस तरह उलझ जाता है कि वह किसी अन्य काम को जारी रखने में सक्षम होने के लिए बेकार हो जाता है। इस तरह, भारत के लगभग तीन करोड़ लोग किसी भी समय पीड़ा के कारण बोझिल रहते हैं। इसलिए, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि भले ही तथाकथित 'समावेशी विकास' हो, जिसके बारे में साल-दर-साल सुनाई देता है, फिर भी उनका बहुत कुछ नहीं सुधरता है।

यह स्पष्ट है कि हम अभी तक मुक्त नहीं हुए हैं, यह हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में स्पष्ट है। 15 अगस्त 1947 से पहले, ब्रिटिश शासन के खिलाफ अहिंसक और हिंसक आंदोलनों को देखना काफी साधारण घटना था और उसी को क्रूरतापूर्वक दबाने के लिए शाही पुलिस स्वतंत्रता सेनानियों पर अत्याचारपूर्ण उत्पीड़न करती थी। उन दिनों में यह काफी समझ में आता था क्योंकि पुलिस शाही नौकर के रूप में संप्रभु के हितों की रक्षा के लिए बेरहमी से भी कार्य करने के लिए बाध्य थी। लेकिन, आश्चर्यजनक रूप से, उसी तरह

की पुलिस ज्यादतियां अभी भी बहुत आम हैं, जब किसी को यह समझाया जाता है कि भारत ने राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है। अगर इसे सच माना जाए तो पुलिस बल किसका हितों की रक्षा कर रहा है? जब लोकतंत्र ने लोगों को देश का मालिक बना दिया है, तो फिर वही लोग किसके खिलाफ आंदोलन कर रहे हैं? लोकतंत्र की शर्तों के अनुसार जब हम कानून बनाने वाले होते हैं, तो हमें खुद बनाए गए कानूनों को तोड़ने के लिए क्या मजबूर करता है? अब समय आ गया है कि ऐसे सभी सवालों पर गौर किया जाए और हमें इसे खुद करना होगा, वही हम, यानी इस देश के सभी लोग एक साथ लिए गए, सिर्फ मनुष्य बिना जो कोई अन्य पहचान नहीं रख सकते।

इस संदर्भ में, 'देश' शब्द के आंतरिक महत्व को देखना आवश्यक है। मनुष्यों द्वारा बसा हुआ क्षेत्र एक 'देश' कहलाता है। मनुष्यों के बिना कोई देश अस्तित्व में नहीं आ सकता। उदाहरण के लिए, हालांकि एक विशाल क्षेत्र है, फिर भी चंद्रमा पर कोई देश मौजूद नहीं है क्योंकि वहां कोई मनुष्य नहीं रहता है। इसका मतलब है कि 'मनुष्य' और 'देश' शब्द घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। इसलिए, तार्किक रूप से यह इस प्रकार है कि एक देश का विकास उसकी मानव आबादी की प्रगति को प्रतिबिंबित करना चाहिए, क्योंकि कोई भी देश उस लोगों को पीछे छोड़कर आगे नहीं बढ़ सकता है जो स्वयं देश को जन्म देते हैं। तथाकथित उन्नति के पैमाने में, इस देश के अधिकांश लोग पिछड़े हुए बताए जाते हैं। लेकिन यह एक गलत धारणा है। कृत्रिम रूप से बनाए गए भेदभाव को कायम रखने के लिए, आबादी के उक्त बहुसंख्यक लोगों को जानबूझकर ऐसी स्थितियों में रखा जाता है। समाज के गठन के शुरुआती चरण में ही भेदभाव का बीज सावधानीपूर्वक बोया गया था ताकि मुट्ठी भर लोग मानवता के परिश्रमी द्रव्यमान द्वारा उत्पादित कड़ी मेहनत का लाभ उठा सकें।

यदि वे लोग जिनका श्रम अपरिहार्य है, एक एकीकृत पूरे के रूप में करीब आते हैं, तो स्पष्ट रूप से उक्त मुट्ठी भर लोग समाज के विशाल बहुमत पर अपने वर्चस्व को लंबे समय तक जारी नहीं रख सकते हैं। इस कारण से, आबादी के बीच भेदभाव पैदा करके, उन्हें महत्वहीन कमजोरों में बदल दिया गया है। नतीजतन, समूह के रूप में, वे कभी भी उस कष्ट पर सवाल उठाने की हिम्मत नहीं कर सकते हैं जो उन्हें सदियों से भुगतना पड़ रहा है। और जब तक कुछ पारंपरिक गहरी जड़ें वाली विचारधाराओं को आमूल-चूल नहीं बदला जाता, तब तक यही जारी रहेगा, जिसकी कुंजी वास्तव में आम लोगों के हाथ में है। देश को बदलने के लिए खुद को बदलना होगा, जिसके लिए स्वतंत्र सोच की शक्ति होना जरूरी है। लेकिन मनुष्यों के बिना देश की अवधारणा ही शून्य है, इसलिए, देश में मानवीय कार्रवाई से होने वाली किसी भी चीज के लिए केवल लोगों को जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। चूंकि 'हम' शब्द 'मैं' का बहुवचन रूप है, इसलिए तकनीकी रूप से मैं ही देश हूं। इसका मतलब है कि मैंने सीधे देश बनाया है। मेरे बिना कोई देश नहीं हो सकता!

शायद कोई पूछे: "इस छोटे से विचार के आधार पर, क्या देश की वर्तमान स्थिति में सुधार संभव है?" उत्तर होगा: "निश्चित रूप से, क्योंकि 'मैं' का परिवर्तन स्वयं देश के परिवर्तन का संकेत है।" फिर भी, कोई कह सकता है: "यदि यह विचार इतना शक्तिशाली है तो लोगों का दुख बहुत पहले ही मिट गया होता। इसके अलावा, यह भी सच है कि देश बहुत आगे बढ़ा है। इस देश ने अंतरिक्ष तकनीक में भी उल्लेखनीय प्रगति की है। इसका अर्थ है कि लोगों के जीवन स्तर में काफी सुधार हुआ है।" इस संदर्भ में, हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि उक्त प्रगति का फल केवल लोगों के एक अत्यंत छोटे वर्ग द्वारा ही भोगा जा रहा है, जबकि विशाल बहुमत उक्त प्रगति से दूर रखा गया है। इस देश की अधिकांश आबादी में अभी भी भुखमरी, कुपोषण, आत्महत्या आदि व्याप्त हैं। इन सब के पीछे एक ही कारण है कि 'मैं देश हूं' का विचार अभी तक समाज में नहीं पहुंच पाया है।

केवल इस विशेष चेतना की कमी के कारण, देश की दयनीय स्थिति नहीं बदल रही है। यदि लोग ऐसी चेतना के साथ जागते हैं, तो इससे सामाजिक व्यवस्था में अनावश्यक उथल-पुथल होगी जो क्रूर शोषण पर आधारित है। ताकि ऐसी स्थिति न उत्पन्न हो, शोषकों की कम संख्या वाले लोग जानबूझकर इस विचार को एक यूटोपिया बताकर नजरअंदाज करने का प्रयास करेंगे। वे समझेंगे कि एक बार जब लोग समाज में अपनी वास्तविक स्थिति को समझ लेंगे तो उनकी सारी दुष्ट संरचना ताश के पत्तों की तरह बिखर जाएगी। लेकिन तथ्य यह है कि न केवल यह विचार एक यूटोपिया है, बल्कि यह तथाकथित सभ्य व्यवस्था को विघटित करने का एक बहुत ही सरल तरीका भी है। ताकि यह स्पष्ट मार्ग लोगों की नजरों से ओझल रहे, लोगों के अधिकांश हिस्से को अशिक्षा और गरीबी के अंधकार में डालकर शुरू से ही प्रयास किए गए हैं। अब समय आ गया है कि रास्ते की तलाश की जाए और हम सभी इस दिशा में प्रयास करेंगे क्योंकि हम इस देश के अवतार हैं!

किसी भी सिद्धांत की जटिलता में न पड़ते हुए, इस देश की पूरी स्थिति को समझने के लिए, आइए एक बड़े घर का उदाहरण लेते हैं जिसमें किसी तरह की उत्सव की धूम मची हो। मान लीजिए रात हो गई है और घर अच्छी तरह से रोशन है और मेहमान सभी मौज-मस्ती के मूड में हैं। अचानक, एक छिपे हुए इरादे से मान लीजिए कोई बिजली आपूर्ति का मुख्य स्विच बंद कर देता है। एक ही बार में पूरा घर अंधेरे में डूब जाएगा और लोगों के डरने से बड़ा उपद्रव जरूर होगा। हर कोई घर से बाहर निकलने की कोशिश करेगा लेकिन अंधेरे के कारण, भागने में कठिनाई का सामना करते हुए, वे शोर-शराबा करने लगेंगे। अनजाने में कोई एक दूसरे को भी मार सकता है; टेबल और कुर्सियां उलट-पुलट हो जाएंगी आदि। दूसरे शब्दों में, यह एक अराजक स्थिति की ओर ले जाएगा। अब सवाल है: इस प्रतीत होने वाले अंतहीन अराजकता से कैसे बाहर निकला जाए?

बिजली से अनजान लोगों के लिए इसे कम करना बेहद मुश्किल लगेगा। कई लोग स्थिति को लोगों की विशेषताओं, यानी उनकी कंजूसी, स्वार्थ आदि के लिए भी जिम्मेदार ठहराएंगे। लेकिन समाधान सोचे जाने से आसान है। बस मुख्य बिजली स्विच को "चालू" करना है। प्रकाश की मात्र उपस्थिति अंधेरे द्वारा पैदा किए गए पूरे विकार को कुछ ही समय में नष्ट कर देगी। इसी तरह, इस विशाल भूमि की सभी परेशानियों का असली कारण हमारे मन में अज्ञानता के जन्मजात अंधकार में छिपा है। जब तक इसे एक बार और सभी के लिए मिटा नहीं दिया जाता, तब तक समस्याएं अनिश्चित काल तक बनी रहेंगी और हम एक-दूसरे से दुश्मन की तरह लड़ते रहेंगे क्योंकि अंधेरा हमें खुद को दोस्त के रूप में पहचानने से रोकेगा। लेकिन यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि किसी ने लाइट बंद कर दी है। वास्तव में मानव सभ्यता के इतिहास में, पूर्ण जागरूकता का प्रकाश कभी भी चालू नहीं हुआ है। यही कारण है कि दुनिया के अधिकांश लोग स्वतंत्र सोच से वंचित रहे हैं। लेकिन हम खुद को अपनी सच्ची आंतरिक शक्ति के बारे में जागरूक बनाने के इस असंभव कार्य में पूरे मन से प्रयास करने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं। और इसके लिए समय आ चुका है।

शुरू करने के लिए, आइए पहले इस देश के नाम के बारे में सोचें। प्राचीन काल से इसे "भारतवर्ष" के नाम से जाना जाता था। सिंधु नदी के किनारे एक सभ्यता विकसित हुई, जिसे विदेशी भाषा में ‘Indus Valley Civilisation’ (सिंधु घाटी सभ्यता) के नाम से जाना जाने लगा। सिंधु नदी के किनारे बनी सभ्यता से पहले, इस भूमि के दक्षिणी भाग में, एक अत्यधिक विकसित सभ्यता पहले से ही फल-फूल रही थी, जो रामायण में वर्णित विवरण से स्पष्ट है। फिर भी विदेशी आक्रमणकारियों ने अपने स्वार्थ के लिए पूरे देश के लिए Indus Valley Civilisation के अनुसार देश का नाम 'इंडिया' रखा। अजीब बात है कि 'स्वतंत्रता' के बाद भी इस महान प्राचीन भूमि का नाम अभी भी 'इंडिया' है। मनुष्यों के मामले में कभी-कभी

हमें एक से अधिक नाम मिलते हैं, लेकिन इस भूमि के लिए 'इंडिया' और 'भारत' दो आधिकारिक नाम कैसे हो सकते हैं?

हमारी गहरी दासता का एक चमकदार उदाहरण स्वयं संविधान में मिलता है जहां देश का नाम दिया गया है - "India, that is Bharat"। यह ध्यान देने योग्य है कि अभिव्यक्ति “Bharat, that is India" नहीं है। ताकि ब्रिटिश यों को समझने में कोई कठिनाई न हो, 'India' नाम पहले रखा गया है। जैसा कि हम खुद को सचमुच स्वतंत्र घोषित करते हैं इसलिए हमारे देश के नाम के लिए हम "भारत" शब्द स्वीकार करेंगे न कि 'इंडिया'। कई लोगों ने "महाभारत" का अध्ययन किया है लेकिन किसी ने भी "महाइंडिया” जैसा कुछ नहीं पढ़ा है। आइए हम अपने देश भारत से "इंडिया" शब्द को खत्म कर दें क्योंकि यह दासता का एक कलंक मात्र है।

क्योंकि सच्ची जागरूकता की मोमबत्ती कभी नहीं जलाई गई है, इसलिए लोगों को भी सचमुच आजादी का स्वाद कभी नहीं मिला। समाज के गठन की शुरुआत से ही सत्ता 'राजा' के हाथ में आ गई। उसने जो कुछ भी आदेश दिया वह कानून बन गया, हमेशा अंतिम शब्द उसके पास थे। लेकिन हमें यह एहसास नहीं होता कि स्वयं 'राजा' की 'राजात्व', जो सभी कानूनों का मूल है, स्वयं पूरी तरह से अवैध है। आइए इसे एक बार फिर दोहराएं कि हम सीधे-सीधे मामले में जाएंगे बिना सुंदर सिद्धांतों की झाड़ियों को पीटे।

इसकी व्याख्या करने के लिए, आइए मानव समाज के गठन से पहले के प्रागैतिहासिक समय के एक दिन के बारे में सोचें। एक दुबली नदी बह रही थी, जिसके किनारे पर एक आम का पेड़ खड़ा था। एक आदमी पेड़ पर चढ़कर आम तोड़ रहा था। थोड़ी दूर पर एक और आदमी मछली पकड़ने में व्यस्त था। उस समय एक तीसरा आदमी दिखाई दिया। थोड़ी देर देखने के बाद उसने पेड़ पर लगे आदमी से पूछा- तुम क्या तोड़ रहे हो दोस्त? तुरंत उसे जवाब मिला- यह एक फल है। क्या आप इसे आजमाना चाहेंगे? अजनबी

ने एक पका आम लिया और उसे बहुत अच्छा लगा। उसने आम वाले को धन्यवाद दिया और फिर मछली पकड़ने वाले आदमी के पास गया। इसी तरह की बातचीत के बाद, उसे भी एक मछली उपहार के रूप में मिली और उसने मछली वाले को धन्यवाद दिया।

अगले दिन अजनबी फिर से मौके पर आया, इस बार अपने एक दोस्त के साथ। सबसे पहले, उन्होंने आम तोड़ने वाले आदमी से मुलाकात की। जब पेड़ पर लगे आदमी को पता चला कि नवागंतुक भी आम चखने में रुचि रखता है, तो उसने दोनों का बढ़े हुए उत्साह के साथ स्वागत किया और बहुत बाध्य हो गया। बाद में मछली वाले के साथ भी ऐसा ही हुआ। यह देखा जाता है कि बिना कोई श्रम किए, आम और मछली का सेवन करके, अजनबियों ने मेहनतकशों की तुलना में लगभग दोगुनी ऊर्जा संचित की। ऐसा इसलिए है क्योंकि मेहनतकशों ने पेड़ पर चढ़ने या मछली पकड़ने की प्रक्रिया में अपनी लगभग आधी ऊर्जा खर्च कर दी, जबकि अजनबियों ने उक्त उद्देश्य के लिए कोई ऊर्जा खर्च नहीं की। इस तरह धीरे-धीरे तीसरे व्यक्ति ने छल के तरीके का इस्तेमाल करते हुए दूसरों के श्रम की फसल का सेवन करके अधिक से अधिक शक्तिशाली हो गया। जैसे-जैसे उसकी ताकत और प्रभाव बढ़ता गया, लोग उसके सामने डर के मारे कांपने लगे। जो पहले स्वेच्छा से एक एहसान के रूप में दिया जाता था, वह समय के साथ सुरक्षा धन के रूप में अनिवार्य हो गया, जिसने अंततः उसे कानून निर्माता और राजा बना दिया। यह 'कानून के शासन' की आड़ में लोगों के शोषण की शुरुआत थी।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चालाक व्यक्ति ने आम तौर पर लोगों को धोखा देकर अपना 'राजत्व' शुरू किया, दूसरे शब्दों में, अवैध रूप से। जो कभी दया से दिया जाने वाला सचमुच भिक्षा था, वह बाद में राजस्व या कर के जबरन संग्रह में बदल गया। समय-समय पर आबादी से इस कर के संग्रह के मार्ग को सुगम बनाने के लिए विभिन्न नीतियां शुरू की गई हैं। एक तरीका, जिसे अर्थशास्त्र कहा

जाता है, आज लगभग शास्त्र के स्तर तक पहुंच गया है। चूंकि "बल ही अधिकार है" पूरे ब्रह्मांड में एकमात्र प्रेरक शक्ति है, इसलिए निस्संदेह राजा कोई गलती नहीं कर सकता और वह हमेशा सही होता है। चूंकि संप्रभु का आदेश ही कानून है, इसलिए कानून का पालन करने वाले प्रजा राजा का पालन करने के लिए बाध्य हैं।

हालाँकि, लोगों ने स्वेच्छा से राजा की संप्रभुता स्वीकार नहीं की, उन्हें क्रूर बल का प्रयोग करके ऐसा करने के लिए मजबूर किया गया। फिर भी राजा कभी नहीं भूलता कि बिना उसके आज्ञाकारी प्रजा, वह एक पल के लिए भी आपना सिंहासन पड़ मौजूद नहीं रह सकता। तथ्य यह है कि प्रजायों को यह एहसास नहीं होता है कि वे सभी शक्ति के वास्तविक मूल हैं, और वे सभी समान हैं और एक ही परिवार से संबंधित हैं; इसने शोषण प्रणाली की शुरुआत के शुरुआती चरण से उनके बीच एक विभाजन पैदा कर दिया है। अमीर और गरीब, पढ़े-लिखे और अशिक्षित, उच्च और निम्न के अलावा, विभिन्न धर्मों, जातियों आदि का आविष्कार करके अन्य कृत्रिम श्रेणियों की मेजबानी सावधानीपूर्वक तैयार की गई थी। इस तरह, लोगों को बिना संख्या के समूहों में विभाजित किया गया है, जो कभी अस्तित्व में नहीं थे या प्रकृति में मौजूद नहीं हो सकते हौ। भोले-भाले प्रजायो की नजरें राजा के इस चालाक कदम को पकड़ने में विफल रहीं क्योंकि उन्हें बिना किसी समझदारी के आपस में लड़ने में व्यस्त रखा गया था। इस तरह राजतंत्र के तंतुओं ने पूरे मानव समाज को निगल लिया।

इन परिस्थितियों में, यह ध्यान दिया जा सकता है कि 'गरीब' शब्द वास्तव में एक गलत नाम है। प्रथागत रूप से एक व्यक्ति को गरीब कहा जाता है जिसे अपने निर्वाह के लिए रोज संघर्ष करना पड़ता है, उदाहरण के लिए, एक कोयला खदान में काम करने वाला। अपनी जान जोखिम में डालकर वह हर दिन कोयला उठाने के लिए एक खदान के अंदर उतरता है। कोयले के बिना कोई कोयला आधारित ताप विद्युत संयंत्र होगा? या उस मामले के लिए, क्या कोयले के

उपयोग पर निर्भर विशाल उद्योगों को स्थापित करना संभव होगा? इसलिए अंतिम विश्लेषण में, इस विशाल धन का वास्तविक मूल वह "गरीब" कार्यकर्ता है। फिर हम उसे "गरीब" कैसे कह सकते हैं जो इतने विशाल धन का निर्माता है?

अब आइए 'अशिक्षित' शब्द पर आते हैं। हम, तथाकथित 'पढ़े-लिखे' लोग, किसान या मोची को अशिक्षित व्यक्ति कैसे कह सकते हैं? हमें कभी यह नहीं सूझता कि हम, जो शिक्षा का दावा करते हैं, वह काम नहीं कर सकते जो एक किसान या मोची आराम से कर सकता है। क्या हम तब अशिक्षित भी नहीं हैं? उनका आमतौर पर कोई औपचारिक शिक्षा नहीं होने का कारण यह है कि उन्हें ऐसे अवसरों से वंचित रखा गया था। यह ऐसा है जैसे किसी के पैर को जानबूझकर तोड़ दिया जाए, बाद में उसके 'दुर्भाग्य' के लिए दया कर रहा हो!

तथाकथित लोकतंत्र राजतंत्र के बाद आया। राजा की ताकत से ईर्ष्या करके कुछ लोगों ने सत्ता हथियाने की साजिश रची। वे समझ गए थे कि सच्चा सर्वोच्च अधिकार लोगों के हाथ में है, इसलिए लोगों के नाम (डेमोस) का इस्तेमाल 'डेमोक्रासि' यानी 'लोकतंत्र' शब्द में किया गया था, जो स्पष्ट रूप से यह अर्थ बताता है कि लोग सीधे देश के मामलों का प्रबंधन कर रहे थे। लेकिन तथ्य यह है कि वास्तविकता में 'लोकतंत्र' केवल राजतंत्र का एक और रूप है, फर्क सिर्फ इतना है कि राजतंत्र में 'एक राजा' के स्थान पर 'लोकतंत्र' में कई 'मंत्री' होते हैं।

चूंकि राजा द्वारा प्रयोग किए गए सत्ता को लागू करने के लिए प्रजायों की दासता की बेड़ियों को अक्षुण्ण रखना चाहिए, इसलिए तथाकथित लोकतंत्र में भी राजतंत्र के दौरान मौजूद सभी कानूनों को लोगों को लूटने की व्यवस्था को निर्बाध रूप से बनाए रखने के लिए बरकरार रखा गया है। परिणामस्वरूप, लोगों की धन के प्रदाता के रूप में भूमिका को पूर्व राजशाही के दिनों की तरह ही अपरिवर्तित

रखा गया है। इसलिए, व्यापक रूप से प्रचारित बयानबाजी कि 'हम सभी लोकतंत्र में राजा हैं' केवल कवि की कल्पना है, जो वास्तविकता में मौजूद नहीं है। 'लोकतंत्र' में यह कहा जाता है कि लोगों के प्रतिनिधि देश के मामलों को 'निर्देशित' करेंगे, लेकिन वास्तव में, राजनीतिक दल द्वारा चुने गए कुछ लोग देश पर 'शासन' कर रहे हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि 'सत्तारूढ़ दल' (Ruling Party) शब्द आज भी मौजूद है। यह सवाल नहीं पूछा जाता कि 'स्वतंत्रता' प्राप्त होने के बाद भी 'शासक' कहां मौजूद है, या यहां तक कि 'लोकतंत्र' में 'सरकार' यानी Government शब्द की प्रासंगिकता कहां है?

इस देश में चुनाव 'प्रतिनिधित्व के लोगों के अधिनियम, 1951' के अनुसार आयोजित किए जाते हैं, जबकि जो लोग चुनाव में 'प्रतिस्पर्धा' करते हैं, वे लोगों के सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं। लगभग हर मामले में, वे एक या दूसरे राजनीतिक दल द्वारा नियंत्रित होते हैं। इसलिए उनकी जिम्मेदारी उस दल के प्रति अधिक होती है जिससे वे संबंधित हैं, न कि लोगों के प्रति। यह मान लेना ही उचित है कि सभी लोग जो चुनाव में 'प्रतिस्पर्धा' करते हैं, उनका प्राथमिक सरोकार अपने देश के लोगों का कल्याण होना चाहिए। साथ ही, राजनीतिक दलों के पास उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निश्चित रूप से सुव्यवस्थित योजनाएँ होनी चाहिए। यदि यह सच है तो चुनाव 'जीतने' के लिए इतनी ईर्ष्या क्यों है? मान लीजिए, एक घर को रंगने के संदर्भ में किसी ने कहा कि सफेद रंग सबसे उपयुक्त होगा। दूसरे ने कहा कि गुलाबी रंग बेहतर होगा। तीसरा ग्रे के लिए पक्षपाती हो सकता है। लेकिन निश्चित रूप से उन सभी की ईमानदारी से इच्छा है कि घर सुंदर दिखे। अगर वे एक-दूसरे के दुश्मन नहीं हैं, तो राजनीति में ऐसा क्यों नहीं होता? ऐसा इसलिए नहीं होता क्योंकि शोषण की यथास्थिति को जारी रखने के लिए पारस्परिक शत्रुता बनाए रखना महत्वपूर्ण है। इसलिए, स्पष्ट रूप से यह इस प्रकार है कि जब तक राज्य व्यवस्था में एक मौलिक परिवर्तन नहीं किया जाता, तब तक लोगों की उचित प्रगति और

स्थिति में सुधार असंभव है। और इसे प्राप्त करने के लिए हमें पहले अपनी कमजोरियों के स्रोतों को खत्म करना होगा।

हम सभी सोचते हैं, एक व्यक्ति द्वारा बाकी व्यवस्था की जड़ता को कैसे बदला जा सकता है? सबसे पहले, हम इस बात पर ध्यान नहीं देते हैं कि देश की वर्तमान स्थिति हमारी निष्क्रियता का परिणाम है। एक बार जब हम आगे बढ़ना शुरू करेंगे तो इसका अंत होना तय है। दूसरे, मैं अकेला नहीं हूं। एक अरब से अधिक तीन सौ मिलियन 'मैं' मिलकर वर्तमान 'भारत' का गठन करते हैं। प्रत्येक 'मैं' एक दूसरे से गहराई से जुड़ा हुआ है, जैसे कि ट्रिलियन कोशिकाओं का अकल्पनीय लगाव मानव शरीर में होता है। शरीर में चोट लगने पर पूरा शरीर एक साथ प्रतिक्रिया करता है। और ट्रिलियन कोशिकाएं मिलकर उस आक्रमण को रोकने के लिए प्रतिक्रिया करती हैं। इससे पता चलता है कि एक कोशिका कितनी ऊर्जावान होती है जब वह अन्य कोशिकाओं से जुड़ी होती है। इसी तरह, हम में से प्रत्येक एक विशाल शक्ति का स्रोत है जिसके बारे में हम बिल्कुल अनजान हैं!

जब इस हमारी भूमि के सभी लोग महसूस करेंगे कि हम सभी एक ही परिवार के सदस्य हैं और हम एक-दूसरे के पूरक हैं, तो हमारी चेतना जागृत हो जाएगी। जैसा कि एक आदर्श परिवार में, किसी भी भ्रष्टाचार के लिए कोई जगह नहीं है, उसी तरह, देश में भ्रष्टाचार का अभ्यास करने का कोई कारण नहीं होगा। जिस तरह एक समस्या पूरे परिवार के सभी सदस्यों द्वारा साझा की जाती है, उसी तरह हम भी देश के किसी भी हिस्से में होने वाली हर समस्या को आपस में बांट लेंगे। देश में कहीं भी कोई भूखा नहीं मरेगा। इससे लोगों के मन से नफरत, ईर्ष्या या जलन के सभी कारण एक साथ समाप्त हो जाएंगे।

दूसरी ओर, चूंकि इस दुनिया में मनुष्य का स्थान सब कुछ से ऊपर कहा जाता है, इसलिए धन को भी एक ऐसा स्थान प्राप्त होना चाहिए, जो मनुष्य से नीचे हो। लेकिन वास्तव में, जैसा कि इसके

विपरीत सत्य होने का अनुभव किया जाता है, इसलिए हम सचेत रूप से धन का भी पुनर्मूल्यांकन करेंगे। मनुष्य से ऊपर कुछ भी नहीं होगा, पैसा भी नहीं। चूंकि 'लोकतंत्र' एक गलत नाम है, इसलिए आइए हम ऐसे आदर्श सिस्टम को कुछ और नाम दें। चूंकि लोगों का अस्तित्व एक देश का गठन करता है, इसलिए हमने एक नया शब्द "गणसत्ता" गढ़ा है, जिसका अर्थ है कि ऐसे राज्य में लोग देश के प्रबंधन के हर मामले में सर्वोच्च भूमिका निभाएंगे।

एक तथाकथित 'लोकतंत्र' में लोग केवल 'मतदाता' या 'निर्वाचक' की भूमिका निभाते हैं, जबकि उन पर शासन करने की सच्ची शक्ति 'निर्वाचित' जनप्रतिनिधियों के हाथ में होती है। एक बार किसी भी तरह से 'चुनाव' जीतकर, चाहे वह गलत हो या सही, 'लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधि' पूरी व्यवस्था का नियंत्रण अपने हाथ में ले लेते हैं और लोग केवल अपने खतरे के मूक दर्शक बन जाते हैं!

गणसत्ता के तहत यह स्थिति आमूल-चूल बदल जाएगी। लोग 'चुनाव' के बाद भी अपनी वास्तविक शक्ति का प्रयोग करेंगे। सक्षम अधिकारियों द्वारा चुनाव कानून में एक उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए ताकि एक निर्वाचित प्रतिनिधि निर्वाचकों की इच्छा के दौरान पद धारण करे। इसका मतलब है कि लोग निर्वाचित प्रतिनिधि को हटाने की शक्ति का प्रयोग करेंगे जब उन्हें आवश्यक लगेगा, जिससे भ्रष्टाचार का मूल से ही उन्मूलन होगा। यहां तक कि इस तरह की वापसी की संभावना भी संबंधित व्यक्तियों को सही संदेश भेजकर स्थिति में नाटकीय रूप से सुधार करेगी।

एक बार गणसत्ता मजबूती से जड़ जमा लेती है, तो हम में से प्रत्येक को धीरे-धीरे यह एहसास होगा कि हमारा अस्तित्व केवल दूसरों के अस्तित्व पर निर्भर करता है। हम किसी से ऊपर या नीचे नहीं हैं, हर कोई समान रूप से महत्वपूर्ण है। परिणामस्वरूप, एक-दूसरे के प्रति कोई शत्रुता का संकेत नहीं होगा, जैसे कि शरीर की खरबों कोशिकाओं के बीच कोई शत्रुता नहीं है। यह याद रखना महत्वपूर्ण

है कि पैर, मस्तिष्क या शरीर का कोई भी हिस्सा समान कोशिकाओं से बना होता है और यही उन्हें समान रूप से महत्वपूर्ण बनाता है। फिर भी मानव समाज में इस तरह के सामंजस्य का कोई संकेत नहीं मिलता, जो कि काफी स्वाभाविक होना चाहिए। इसका कारण बहुत सरल है! अनादि काल से लोगों को एकीकृत होने से रोकने के लिए, उनके बीच विभाजन "राजाओं" द्वारा किया गया था, जो उन्हें वर्गीकरण के सतही लेबल प्रदान करते थे। इसलिए असली आदमी अभी भी इंद्रधनुषी रंग के भ्रामक नारे: 'एकता में विविधता' के नीचे दबा पड़ा है। जब असली आदमी उठ खड़ा होगा और स्थिति का नियंत्रण ले लेगा, तो गणसत्ता स्थापित होगी, और वास्तव में गणसत्ता के राज्य में ही दुनिया का भविष्य निहित है।

ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए "मैं ही भारत" नामक एक राजनीतिक दल का गठन किया गया है। चूंकि हमें विश्वास है कि हमारी इस भूमि के सभी लोग एक ही परिवार के हैं, इसलिए किसी भी कोने से कोई बाधा नहीं आ सकती क्योंकि हम सभी देश की समग्र प्रगति चाहते हैं। कृपया आइए और साथ मिलकर आगे बढ़ते हैं। इस देश का भविष्य, जिसका अर्थ है हमारा भविष्य, वही होगा जैसा हम चाहते हैं, क्योंकि हमारे बिना, यानी मेरे बिना, भारत का अस्तित्व नहीं है...

मैं ही भारत !

मैं ही भारत संविधान का एक अंश:

"अनुच्छेद **II.** लक्ष्य और उद्देश्य

पार्टी का केंद्रीय लक्ष्य और उद्देश्य भारत की पूरी आबादी को एक बड़े परिवार में एकीकृत करना होगा। उक्त परिवार के सभी सदस्यों को केवल व्यक्तिगत प्राकृतिक मानव के रूप में मान्यता दी जाएगी, जो सभी सम्मान में समान हैं, उन पर धर्म, जाति, वर्ण, लिंग, सामाजिक स्थिति आदि से संबंधित किसी भी बाहरी और

कृत्रिम भेदभाव के चिह्नों की अवहेलना करते हुए, जो उन्हें लगातार एक दूसरे के बीच विभाजित रखते हैं। पार्टी दृढ़ता से मानती है कि भारत में रहने वाले मनुष्यों की पीड़ा का मूल कारण यह है कि उनमें से अधिकांश को हमेशा निर्णय लेने की मुख्यधारा की प्रक्रिया से दूर रखा जाता है, जबकि केवल मुट्ठी भर लोग देश के मामलों में हेरफेर करते हैं। अपनी पसंद के अनुसार बाकी आबादी को केवल संख्या के रूप में मानते हुए बुद्धिमान इंसानों के बजाय। चूंकि दशकों बीत चुके हैं और कोई भौतिक परिवर्तन नहीं हुआ है, इसलिए यह समय आ गया है कि लोग स्वयं सीधे स्थिति का संचालन करें ताकि भारत हर क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त कर सके। चूंकि केवल मानव निवासियों की उपस्थिति से एक क्षेत्र देश में बदल जाता है, इसलिए इस देश का प्रत्येक निवासी वास्तव में भारत का पर्याय है। इस तरह की प्राप्ति कि वह स्वयं भारत है, प्रत्येक व्यक्ति में राष्ट्र निर्माण के पवित्र कार्य में शालीनता से आगे आने के लिए अत्यधिक आत्मविश्वास पैदा कर सकती है। इसलिए, पार्टी का नाम "मैं ही भारत" है।

इस केंद्रीय विषय से निर्देशित होकर, पार्टी निम्नलिखित कार्यवाही करेगी: एक स्वतंत्र व्यक्तिगत मानव की संप्रभुता का सर्वोच्च सम्मान करना और यह महसूस करना कि उनमें से प्रत्येक की एक सामान्य विरासत है और वह इस भूमि के स्वामी हैं, जिनके स्पष्ट आदेश के बिना इस देश में कुछ भी नहीं चलेगा; कि गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक भेदभाव आदि, जो व्यक्तिगत रूप से शत्रुता पैदा करने वाले घर्षण के घटक हैं, जानबूझकर उन्हें शोषण के लिए सदा के लिए अधीनता में रखने के लिए बनाए गए हैं; कि एक व्यक्ति जिसे गरीब कहा जाता है वह गरीब नहीं है, इसके विपरीत, वह ही धन का एकमात्र स्रोत है; कि तथाकथित "कानूनों" के नाम पर औपनिवेशिक शासन के दौरान बनाए गए दासता के उपकरण अभी भी पूरी ताकत से अपने सभी रक्त-चूसने वाले तंतुओं के साथ काम कर रहे हैं, भले ही लोगों को स्वतंत्र कहा जाता है; और यह महसूस करते हुए कि कोई भी मौजूदा व्यवस्था लोगों की सामान्य

इच्छा के अधीन होनी चाहिए और वर्चस्व के साधन के रूप में कार्य नहीं कर सकती है,

मैं ही भारत, भारत के प्रत्येक निवासी को शालीनता से आगे आने और शक्ति की स्थिति के साथ-साथ आत्मविश्वास से देश के मामलों का ध्यान रखने का आह्वान करके मौजूदा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और कानूनी व्यवस्था को आमूल-चूल बदलने में पूरी तरह से सहायक होगा।"